

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 6 अध्याय 18: दिति तथा मरुत्

3 October 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



एक शोकाकुल माता का इन्द्र को नष्ट करने का संकल्प भगवान् की कृपा से उलट जाता है: उसके उनचास पुत्र, जो प्रतिशोध के अस्त्र बनने थे, इसके बदले देदीप्यमान मरुत् पवन-देवों के रूप में उठते हैं और इन्द्र के ही समर्पित भ्राता बन जाते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विङ्गम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। षष्ठ स्कन्ध का अठारहवाँ अध्याय अदिति के पुत्रों की वंशावली का अनुसरण करता है और फिर एक विलक्षण कथा कहता है: किस प्रकार दिति, अपने मारे गए पुत्रों का प्रतिशोध लेने को जलती हुई, एक ऐसे पुत्र को पाने का पवित्र व्रत लेती है जो इन्द्र का वध करे — और किस प्रकार उस व्रत के

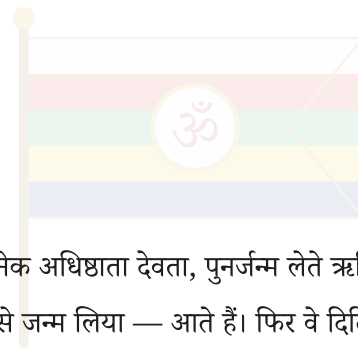
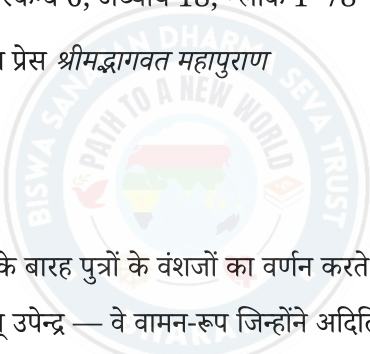
हृदय में स्थित भगवान् विष्णु की आराधना उसके प्रतिशोध को वरदान में बदल देती है, जिससे उसके पुत्र मरुत् बन जाते हैं, उसी राजा के प्रिय साथी जिसे वह नष्ट करना चाहती थी।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 6 (षष्ठ स्कन्ध)
- अध्याय: 18 (अष्टादश अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: दिति का इन्द्र-वध का संकल्प
- मुख्य वक्ता: श्रीशुकदेव गोस्वामी, राजा परीक्षित को कथा सुनाते हुए; कथा के भीतर कश्यप, दिति तथा इन्द्र
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित; बाह्य कथा में नैमिषारण्य के ऋषिगण
- मुख्य स्थल: ऋषि कश्यप का आश्रम
- केन्द्रीय विषय: अदिति के पुत्रों की वंशावली, इन्द्र के विरुद्ध दिति का व्रत, और मरुतों का कृपा-जनित जन्म
- मुख्य श्लोक-परिधि: स्कन्ध 6, अध्याय 18, श्लोक 1-78
- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

वंशावली तथा प्रश्न

श्रीशुकदेव पहले अदिति के बारह पुत्रों के वंशजों का वर्णन करते हैं, जिनमें अनेक अधिष्ठाता देवता, पुनर्जन्म लेते ऋषि भृगु, वाल्मीकि, अगस्त्य और वसिष्ठ, तथा भगवान् उपेन्द्र — वे वामन-रूप जिन्होंने अदिति के माध्यम से जन्म लिया — आते हैं। फिर वे दिति की वंश-परम्परा की ओर मुड़ते हैं, जिसमें महान् भक्त प्रह्लाद और राजा बलि जन्मे, और बताते हैं कि हिरण्यकशिपु तथा हिरण्याक्ष के अतिरिक्त दिति के उनचास और पुत्र थे, मरुत्, जिन्हें इन्द्र ने देवता बना दिया। राजा परीक्षित, इससे चकित होकर, पूछते हैं कि इन्द्र ने इन राक्षस-जन्मे पुत्रों को देवता कैसे बना दिया, और उन्होंने उन्हें क्या सेवा दी थी (श्लोक 1-21)।





अपने मारे गए पुत्रों के शोक में जलती दिति एक ऐसा पुत्र पाने को ऋषि कश्यप की भक्ति से सेवा करती है जो इन्द्र के गर्व को चूर करे (श्लोक 22-37)।

दिति का प्रतिशोध-संकल्प

दिति, जिसके पुत्र इन्द्र के मित्र भगवान् विष्णु द्वारा मारे गए थे, शोक और क्रोध से जल उठी। उसने एक ऐसा पुत्र पाने का निश्चय किया जो इन्द्र के गर्व को चूर करे, और इस गुप्त अभिप्राय से उसने अपने पति, ऋषि कश्यप की, इतनी भक्ति, विनय और मधुरता से सेवा की कि उनका मन मोहित हो गया और उन्होंने उसकी इच्छा पूरी करने का वचन दे दिया। जब उसने इन्द्र का वध करने में समर्थ एक अमर पुत्र माँगा, तो कश्यप शोक और पश्चात्ताप से भर उठे, यह शोक करते हुए कि उन्होंने एक जल्दबाज़ी के वचन से स्वयं को बाँध लिया (श्लोक 22-39)।

फिर भी ऋषि ने उसी क्षण उसे एक ऐसा सत्य भी सिखाया जो उनकी कथा से कहीं परे पहुँचता है — कि प्रत्येक प्रकार की पूजा के पीछे एक ही परम भगवान् खड़े हैं।

किन्तु यह पाकर कि उनका दिया वचन मिथ्या न हो, और यह कि भगवान् के कृपापात्र इन्द्र मृत्यु के योग्य नहीं, कश्यप ने एक मध्य-मार्ग निकाला। इन्द्र का वध करने में समर्थ पुत्र तभी जन्मेगा, उन्होंने दिति से कहा, यदि वह एक वर्ष के पवित्र व्रत को तनिक भी त्रुटि बिना निभाए; किन्तु यदि व्रत खण्डित हुआ, तो वह बालक इसके बदले देवताओं का मित्र बनेगा (श्लोक 40-45)।

पवित्र व्रत

कश्यप ने तब दिति को पुंसवन व्रत विस्तार से सिखाया। इस व्रत को निभाने वाली स्त्री, उन्होंने कहा, किसी प्राणी को हानि न पहुँचाए, कभी शाप या असत्य न कहे, आचरण, वाणी और आहार में पवित्र रहे, क्रोध को स्थान न दे, और प्रतिदिन भोजन से पहले गौ, ब्राह्मणों, देवी श्री और भगवान् विष्णु की पूजा करे, अपने पति को भगवान् ही मानकर चिन्तन करे। श्रद्धापूर्वक एक पूरे वर्ष निभाया गया, वह व्रत उसे वह पुत्र देगा जिसे वह चाहती है (श्लोक 46-54)।



कश्यप दिति को भगवान् विष्णु तथा देवी श्री की आराधना पर केन्द्रित एक वर्ष का पवित्र पुंसवन व्रत सिखाते हैं (श्लोक 45-54)।

दिति ने सहर्ष व्रत आरम्भ किया और गर्भ धारण किया। किन्तु इन्द्र, अपनी मौसी के अभिप्राय को भाँपकर, उसके आश्रम आए और प्रत्येक शिष्टाचार से उसकी सेवा की — प्रेम से नहीं, अपितु, वेश बदले शिकारी के समान, उसके व्रत में किसी त्रुटि की ताक में। बहुत समय तक उन्हें कोई त्रुटि न मिली, और वे अपनी सुरक्षा के लिए व्याकुल हो उठे (श्लोक 55-59)।



दिति के अभिप्राय को भाँपकर, इन्द्र उसके आश्रम में सेवा करते हैं, छिपे शिकारी के समान उसके व्रत में किसी त्रुटि की ताक में (श्लोक 55-59)।

त्रुटि में कृपा

अन्ततः, एक दिन, अपनी तपस्या से क्षीण और भाग्य से अभिभूत, दिति सन्ध्या के समय मुख में भोजन के अवशेष लिए, बिना धोए-कुल्ला किए सो गई — और उस चूक में व्रत खण्डित हो गया। उस क्षण को पकड़कर, योगबल के स्वामी इन्द्र ने उसके गर्भ में प्रवेश किया और अपने वज्र से गर्भ को सात टुकड़ों में काट डाला; और जब वे टुकड़े रो पड़े, तो उन्होंने प्रत्येक को फिर सात में काट दिया। फिर भी भगवान् विष्णु की

कृपा से वे बालक मारे न जा सके। मरने के बजाय, वे उनचास नन्हें प्राणी हाथ जोड़कर पुकार उठे, “इन्द्र, आप हमें क्यों मारते हैं? हम मरुत् हैं, आपके ही भ्राता!” द्रवित होकर, इन्द्र ने उत्तर दिया, “डरो मत; तुम सचमुच मेरे भ्राता हो,” और उनके राक्षसी जन्म का कलंक धुल गया (श्लोक 60-65)।

क्योंकि भगवान् की आराधना की शक्ति ऐसी है, अपूर्ण रूप से भी की गई, कि वह प्रत्येक परिणाम को बदल देती है।

सकृदिष्ट्वादिपुरुषं पुरुषो याति साम्यताम् ।
संवत्सरं किञ्चिदूनं दित्या यद्धरिरर्चितः ॥ ६६ ॥

sakṛd iṣṭvādi-puruṣaṁ puruṣo yāti sāmīyatām saṁvatsaram kiñcid ūnaṁ dityā yad dharir arcitaḥ

अर्थ: परमपुरुष की एक बार भी आराधना करके मनुष्य उनके समान स्थिति प्राप्त करता है; और दिति ने तो श्रीहरि की लगभग एक पूरे वर्ष आराधना की थी। (स्कन्ध 6, अध्याय 18, श्लोक 66)



भगवान् की कृपा से अक्षत, उनचास बालक हाथ जोड़कर इन्द्र को अपने भ्राता मरुत् के रूप में अभिवादन करते हैं (श्लोक 63-67)।

इन्द्र का स्वीकारोक्ति

इन्द्र सहित ये उनचास मरुत् पचास देवता बन गए, उनका राक्षसत्व मिट गया। जब दिति जागी और अग्नि के समान देदीप्यमान शिशुओं को इन्द्र के साथ खड़ा देखा, तो वह शोक के बजाय गद्गद हो गई, और पूछा कि उसका एक अभिलषित पुत्र उनचास कैसे हो गया। इन्द्र ने समूचा सत्य स्वीकार किया: कि, अपने ही स्वार्थ में लगे और धर्म से विमुख होकर, उन्होंने बालक को काटा था, किन्तु उसके जीवित रहने के चमत्कार ने उन्हें उसकी विष्णु-आराधना का फल दिखा दिया। सच्चे ज्ञानी, उन्होंने कहा, भगवान् की आराधना समस्त इच्छा से मुक्त होकर करते हैं, मोक्ष तक की लालसा नहीं रखते (श्लोक 66-74)।

आराध्यात्मप्रदं देवं स्वात्मानं जगदीश्वरम् ।

को वृणीत गुणस्पर्शं बुधः स्यान्नरकेऽपि यत् ॥ ७५ ॥

*ārādhyātma-pradam devaṁ svātmānaṁ jagad-īśvaram ko vṛṇīta guṇa-sparśaṁ budhaḥ syān
narake 'pi yat*

अर्थ: जगदीश्वर की, जो अपना स्वरूप ही दे देते हैं और सबकी आत्मा हैं, आराधना करके कौन बुद्धिमान् उनसे क्षणिक विषय-सुख माँगेगा, जो नरक में भी मिल सकते हैं? (स्कन्ध 6, अध्याय 18, श्लोक 75)

अपनी मौसी से क्षमा माँगते हुए, और यह प्रसन्नता मनाते हुए कि बालक मानो नए जीवन को उठ आया है, इन्द्र ने दिति को प्रणाम किया, जो उनकी सच्चाई से प्रसन्न हुई, और मरुतों सहित स्वर्ग को चले गए। इस प्रकार, श्रीशुकदेव ने समाप्त किया, मरुतों का मंगलमय जन्म सम्पन्न हुआ (श्लोक 76-78)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. प्रत्येक पूजित रूप के पीछे एक ही भगवान् हैं। कश्यप सिखाते हैं कि परम भगवान् वासुदेव ही अनेक नामों और रूपों में सबके द्वारा पूजे जाते हैं, जिससे समस्त सच्ची पूजा उन्हीं तक पहुँचती है (श्लोक 33-35)।
2. भगवान् की आराधना दोषपूर्ण अभिप्राय को भी शुद्ध कर देती है। दिति का व्रत प्रतिशोध के लिए लिया जाता है, फिर भी उसका हृदय विष्णु की आराधना होने से वह विनाश के बजाय वरदान देता है (श्लोक 66)।
3. भगवान् की कृपा उसकी रक्षा करती है जिसे वे रखना चाहते हैं। बार-बार काटे जाने पर भी गर्भ नहीं मारा जा सकता, क्योंकि भगवान् अपने कृपापात्रों की रक्षा करते हैं (श्लोक 65)।
4. शत्रुता भ्रातृत्व में बदल सकती है। इन्द्र के विरुद्ध अस्त्र बनने वाले पुत्र उसके प्रेमपूर्ण साथी, मरुत, बन जाते हैं — कृपा से घुल गई घृणा (श्लोक 63-67)।
5. ज्ञानी भगवान् के अतिरिक्त कुछ नहीं चाहते। इन्द्र घोषित करते हैं कि जिसने भगवान् की आराधना की है वह उनसे विषय-सुख कभी नहीं माँगेगा, जो नरक भी दे सकता है (श्लोक 74-75)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

यह एक विचित्र और अद्भुत कथा है, क्योंकि इसमें लगभग सभी उलझे हुए भाव से कर्म करते हैं, फिर भी कृपा मौन रूप से सब कुछ भलाई की ओर मोड़ देती है। दिति शोक और प्रतिशोध की लालसा से आराधना करती है; कश्यप एक वरदान देते हैं जिसका उन्हें तुरन्त पश्चात्ताप होता है; इन्द्र अपनी मौसी की सेवा केवल उसके व्रत को भंग करने के लिए करते हैं, और फिर उसके अजन्मे बालकों पर प्रहार करते हैं। प्रत्येक मानवीय माप से इसका अन्त त्रासदी में होना चाहिए था। किन्तु समूचे प्रसंग में भगवान् विष्णु की आराधना बुनी हुई है, और वही एक सूत्र इस सब को उद्धार देता है। हत्यारा उत्पन्न करने वाला व्रत इसके बदले उनचास देदीप्यमान देवता उत्पन्न करता है; अस्त्र भ्राता बन जाता है; प्रतिशोध चाहने वाली माता आनन्द में जागती है। भागवत हमें वह दिखा रहा है जिसे वह दोहराते कभी नहीं थकता: कि भगवान् इतने कृपालु हैं कि उनकी ओर

हमारा अपूर्ण, आधा-स्वार्थी मुड़ना भी हमारी इच्छा से कहीं अधिक फल देता है, और कि वे सबसे धुँधले भावों से भी प्रकाश ला सकते हैं। और इन्द्र की समापन स्वीकारोक्ति से वह एक उच्चतर स्वर जोड़ता है — कि ज्ञानी, भगवान् को एक बार चख लेने पर, तुच्छ वस्तुओं के लिए अपने हाथ फैलाकर उनके पास नहीं जाते, क्योंकि उन्होंने स्वयं दाता को पा लिया है। हमारी अपनी भक्ति मिश्रित और अपूर्ण हो सकती है; यह अध्याय हमें आश्चस्त करता है कि वह कभी व्यर्थ नहीं जाती, और कोमलता से हमें बुलाता है कि हम उसे तब तक शुद्ध करें जब तक हम उनके अतिरिक्त कुछ न चाहें।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, भगवान् को एक सरल पूजा अर्पित कीजिए — एक दीप, एक पुष्प, कुछ क्षण उनका नाम — और ऐसा करते हुए, अपने भाव को सच्चाई से देखिए। यदि वह किसी सांसारिक इच्छा से मिश्रित है, तो निराश मत होइए; उसे फिर भी अर्पित कीजिए, यह विश्वास करते हुए कि भगवान् अपूर्ण भक्ति को भी ग्रहण करते और शुद्ध करते हैं। फिर, इन्द्र के बोध का अनुसरण करते हुए, एक ऐसी मौन प्रार्थना जोड़िए जो स्वयं भगवान् के अतिरिक्त कुछ न माँगे, और उस शुद्ध स्वर को उस सब को मधुर करने दीजिए जो आप उन्हें अर्पित करते हैं।

उपसंहार

षष्ठ स्कन्ध का अठारहवाँ अध्याय हमें वंशावली से कृपा तक ले जाता है। दिति, शोकाकुल और प्रतिशोधी, इन्द्र को नष्ट करने वाले पुत्र को पाने का पवित्र व्रत लेती है; किन्तु क्योंकि उसके हृदय में भगवान् विष्णु की आराधना है, उसका प्रतिशोध वरदान में बदल जाता है। जब इन्द्र अजन्मे बालक को खण्डित करते हैं, भगवान् की कृपा उसकी रक्षा करती है, और उनचास मरुत् देवताओं के रूप में तथा इन्द्र के ही भ्राताओं के रूप में उठते हैं। इन्द्र की स्वीकारोक्ति कथा को उसके गहनतम सत्य से सुशोभित करती है: कि ज्ञानी भगवान् से उनके अतिरिक्त कुछ नहीं माँगते। जैसे-जैसे यह स्कन्ध अगले अध्याय में पुंसवन व्रत की विस्तृत विधि की ओर बढ़ता है, हम इस अध्याय का यह आश्वासन साथ ले चलते हैं कि हमारी धुँधली भक्ति भी, उन्हें अर्पित की गई, प्रकाश की ओर मोड़ दी जाती है।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य विद्या हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ तथा साभार

- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), षष्ठ स्कन्ध, अष्टादश प्रवचन।
- शृंखला: Srimad Bhagavatam Wisdom · Biswa Sanatan Dharma Seva Trust।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा का अनुसरण करते हुए प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक द्वारा संबद्धता या समर्थन का कोई अभिप्राय नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-6-chapter-18-diti-vow-and-the-maruts-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

